वाराणसी
२६ जनवरी, २००६

संदेश संख्या – ८७

सांख्य–बोध

सांख्य–दर्शन मानवता की गहन समझदारी है जो वस्तुतः मनुष्य के शरीरी–चेतना में मौलिक परिवर्तन लाने तथा उसे पूर्णतया विखण्डनरहित कर मुक्त करने में सक्षम है । चेतना में विखण्डन विभेदकारी प्रक्रिया के कारण होता है और यह मूल रूप से मानव शरीर में स्नायविक विकृति के परिणामस्वरूप होता है। यही विखण्डन मानवीय कार्यों के प्रत्येक स्तर पर परस्पर विपरीतों के बीच दोलायमान की स्थिति तथा विकल्पों के बीच दुविधा, वर्गीकरण, द्वन्द्व एवं भ्रांति आदि को उत्पन्न करता है एवं बढ़ावा देता है ।

सांख्य–बोध शरीरी–चेतना को उसके विखण्डनों से पूर्ण मुक्ति प्रदान करता है और इसी कारण इसके प्रवर्तक महर्षि कपिल जो भारतवर्ष के महान प्राचीन ऋषि थे एवं वर्तमान पश्चिम बंगाल–क्षेत्र में रहते थे, का नाम अनाममय भगवत्ता के सहस्र नामों में एक नाम के रूप में आता है। (विष्णु–सहस्रनाम, संदेश संख्या ६३, ५७वाँ श्लोक में पहला नाम या, क्रम सूची में ५३१वाँ नाम)। इस महान ऋषि को याद करने के लिए आज भी, प्रत्येक वर्ष मकर–संक्रान्ति (१४ जनवरी) के दिन, पश्चिम बंगाल में जहाँ पावन गंगा नदी 'बंगाल की खाड़ी' में मिलती है, गंगा–सागर मेला का आयोजन किया जाता है । महर्षि कपिलाचार्य (जो कपिल मुनि के नाम से भी जाने जाते हैं) गंगा नदी और सागर के संगम के पास रहते थे।

सांख्य–बोध शरीर में रक्त–कोशिकाओं एवं अस्थि–मज्जा में घटित होना चाहिए। यह बोध बौद्धिक–विलास नहीं है और न ही दार्शनिकों की अपनी अवधारणाओं और निष्कर्षों की संकुचित दुनिया की उत्तेजना। यह बोध है – जीवन का और अनुमानों की सहायता के बिना समझदारी की ऊर्जा में उसकी मुक्ति का । यह महिमामण्डन एवं तुष्टीकरण की खोज में मन की कोई चाल नहीं है । सांख्य का सत्य प्रत्येक व्यक्ति द्वारा पुनराविष्कृत होना चाहिए, न कि विचारों के रूप में उसकी केवल पुनरावृत्ति । विचार ''मैं'' है और इसलिए असत्य है । सत्य की पुनरावृत्ति अवधारणामूलक एवं तकनीकी दुनिया में श्रेष्ठता के लिए की जा सकती है लेकिन व्यापक एवं रूपान्तरकारी समझदारी के क्षेत्र में नहीं। प्राचीन भारतीय समझदारी की दूरदर्शिता ने सांख्य–योग–वेदान्त को वैशेषिक–मीमांसा–न्याय की तुलना में श्रेष्ठ स्थान दिया है क्योंकि वह विभेदकारी चित्तवृत्ति और उसकी जानकारी का ताना–बाना, अनुभव, उद्देश्य और तर्क के परे ले जाता है। वास्तविकता अस्तित्व और प्रेम है न कि अनुभव और तर्क। वास्तविकता के प्रति जागृति मन के आरोपण और कपोल–कल्पना में खोया रहना नहीं है।

पंचेन्द्रियाँ (आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा) पाँच 'तन्मात्राओं' के रूप में कार्य करती हैं और पाँच ज्ञानेन्द्रियों के रुप में भी । 'तन्मात्रायें' जीवन्त इन्द्रियजन्य प्रत्यक्षबोध हैं – जैविक–यंत्र में स्पन्दन या एक तरंग की तरह। उदाहरण के लिए – तन्मात्रा के रूप में आँखें, रेटिना में बने चित्र की तरह, रंगों में कोई भेद नहीं करतीं (काला या सफेद के रूप में भी नहीं), किसी तरह की गहराई या दूरी या समय की माप को नहीं देखतीं । छविनिर्माण, नामकरण और वर्गीकरण के साथ स्मृति का इसमें हस्तक्षेप, आँख का ज्ञानेन्द्रिय के रूप में कार्य का प्रारम्भ है । यह हस्तक्षेप इन्द्रिय–'आँख' का पूर्वाग्रह एवं अहंकार रहित, तटस्थ और बौद्धिक कार्य मात्र है । इसके बाद प्रीतिकर या अप्रीतिकर, पसन्द या नापसन्द, रूचि या अरूचि, उचित या अनुचित आदि के रूप में संस्कृति, परम्परा और अनुबंधन वर्गीकरण के साथ–साथ मानसिक अवशेष एवं अवसाद भी आरोपित कर देते हैं । इसी से 'ज्ञानेन्द्रिय' दोषयुक्त हो जाती है और वह अहंकार की अशिता और निहित स्वार्थ के साथ–साथ अनुभवों की संरचना (मन) का निर्माण शुरू कर देती है । तटस्थ स्मृति में, ''मैं'' अपनी समग्र विनम्रता के साथ केवल संदर्भ बिन्दु और समन्वयकर्त्ता के रूप में होता है। जबकि पूर्वाग्रहयुक्त अनुभव–संरचना में ''मैं'' स्वयं को अहंकार–वर्धक केन्द्र के रूप में प्रस्तुत करता है और सभी प्रकार की जटिलताओं और द्वन्द्वों के साथ सततता को बनाये रखने में उलझा रहता है । ज्ञानेन्द्रिय की पर्याप्त अनुक्रिया के बाद स्मृति में शून्यता होती है, रिक्तता होती है लेकिन इसके अनुभव–संरचना में पूर्वाग्रहयुक्त प्रतिक्रिया होती है और परिणामस्वरूप विभेदकारी उत्तेजना होती है

। वर्गीकरण बुद्धि है, विकल्प मन है तथा द्वन्द्व अहंकार है । उसी प्रकार कान 'तन्मात्रा' के रूप में जानवरों की ध्वनि की तुलना में मानव–ध्वनि के प्रति विशेष रूचि नहीं रखता । परन्तु ज्ञानेन्द्रिय के रूप में यह ऐसी रूचि रखता है । जिह्वा तन्मात्रा के रूप में तिक्त और मधुर के बीच पसन्द या नापसन्द का भेद नहीं करती लेकिन 'ज्ञानेन्द्रिय' के रूप में यह तिक्त की अपेक्षा मधुर अधिक पसन्द कर सकती है । अन्य इन्द्रियों के सम्बन्ध में भी ऐसा ही होता है ।

''पंच कर्मेन्द्रियाँ''– वाणी, हस्त, पाद, मल–मार्ग और मूत्र–मार्ग, शरीर के मुख्यकार्यकारी अंग हैं जो आवश्यकतानुसार उचित उपयोग हेतु दिए गए हैं।

फिर, शरीर में पंचवायु (प्राणेन्द्रियाँ) हैं, यथा–प्राण और अपान (श्वास–उच्छ्वास), समान (जीने की सहज वृत्ति जो मन के कारण प्रायः भय में परिवर्तित हो जाती है) तथा व्यान और उदान (प्रजनन की सहजवृत्ति जो अहंकार के कारण प्रायः कामुकता की मांग में परिवर्तित हो जाती है) । नाभि–क्रिया जीवन–जीने की सहज वृत्ति को मन द्वारा भय में बदलने से रोकती है। महामुद्रा जीवन की प्रजनन की सहजवृत्ति को अहंकार द्वारा कामुकता में परिणत होने से रोकती है। सांख्य के इन २० मूल संकेतकों के अतिरिक्त, ७ और गहन संकेतक हैं और ये हैं – मस्तिष्क, स्मृति, बुद्धि, मन, अहंकार, प्रकृति (गुण रुप में शक्ति की अभिव्यक्ति) और पुरुष (चैतन्य, जो शरीर से चेतना के रूप में युक्त है)। इन गहन संकेतकों की गहरी समझदारी क्रियायोग रिट्रीटों या विश्व के विभिन्न देशों में ''मानव चेतना की प्रकृति'' के ऊपर होनेवाली सभाओं में शिवेन्दु के स्वतःस्फूर्त उद्‌गार द्वारा घटित हो सकती है।

जय महर्षि कपिल

उपसंहार

मस्तिष्क–स्मृति	:	इन्द्रियों द्वारा संग्रहित सूचना भण्डार
बुद्धि	:	ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों की नियन्त्रण–क्षमता
मन–अहंकार	:	ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों का प्रदूषण
प्रकृति–पुरुष	:	शरीरस्थ ऊर्जा और सर्वव्यापक चैतन्य